भक्ति-गीत

लेखक : अशोक कुमार श्रीवास्तव (क़लील झांस्वी)

kumar_incomm@yahoo.co.uk 9978430780

गीत

जीवन का आधार मिला तो बस इक तेरा नाम,

दसों दिसा परनाम प्रभु जी दसों दिसा परनाम !

जग मन भाया,मन भरमाया,भवसागर की माया,

रूप रंग चितवन में उलझी नश्वर मेरी काया,

बहु बिधि जतन किया बुद्धि का ,कोई नहीं परिणाम !

दसों दिसा परनाम प्रभु जी दसों दिसा परनाम !

योग किये,उपवास किये और कर्मकांड और दान ,

जिस जिस ज्ञानी ने बतलाया जैसा जैसा ज्ञान,

सब कुछ करके भी तो अब तक नहीं मिला आराम !

दसों दिसा परनाम प्रभु जी दसों दिसा परनाम !

सत्य समझ कर मिथ्या जग को व्यर्थ गंवाया जीवन,

अंत समय ये समझ में आया कृपा से तेरी भगवन,

अब तुम मुझको भुला न देना, मै ना छोडूंगा हरि नाम !

दसों दिसा परनाम प्रभु जी दसों दिसा परनाम !

गीत

राजा बन कर के भी रावण का वध कर सकते थे -

क्यों तुमने बनवास चुना था राम !

राजकुमार सुकुमार कहाँ तुम और कहाँ पाषाणों पर विश्राम !

देवों की स्तुति पर तुमने जन्म ले लिया दशरथ के घर ,

माता की ही मति फेर कर राज पाट का मोह त्याग कर,

बेला में अभिषेक की तुमने कैसा खेल रचाया राम !

राजकुमार सुकुमार कहाँ तुम,,,,!

जैसे रक्षण किया था तुमने गुरु वशिष्ट के अग्निहोत्र का ,

वैसे ही वध कर सकते थे खर-दूषण का असुर गणों का,

वन वन भटके,कष्ट उठाया इतना भी क्या करने राम !

राजकुमार सुकुमार कहाँ तुम,,,!

तारण शबरी और अहिल्या जैसा वैसे भी कर सकते थे,

वध तो तुम असुरों नरभक्षो का वैसे भी कर सकते थे ,

तब माया के विरह अश्रु क्यों? क्यों सेना गठवाई राम ?

राजकुमार सुकुमार कहाँ तुम ,,,,!

अवतार लिया ,उद्धार किया, संहार किया, उपकार किया ,

जन जन में मर्यादा का पुरुषोत्तम बन संचार किया ,

पर ऐसा भी क्या कष्ट उठाना,ऐसी क्या मर्यादा राम !

राजकुमार सुकुमार कहाँ तुम,,,,!

गीत

कैसा लगता राम अगर कहीं सीता ने त्यागा होता तुमको ?

रामायण तब कैसी होती ? जग पुरुषोत्तम कह पाता तुमको?

वन-गमन आदेश नहीं था,फिर भी साथ वो आयी,

काँटों काँटों चली संग में सेज पली तरुणाई ,

धर्म निभाया उसने अपना किस निष्ठा से रघुराई !

तेरह वर्षों वन में वरना ढाढस कौन बंधाता तुमको ?

कैसा लगता राम ,,,!

सूप-नखा अपमान हेतु ही रावण क्रोध में आया ,

तुम्हें चिढ़ाने ही को तो वो वैदेही हर लाया,

जिस वियोग ने आखिर तुमको कितना तो रुलवाया !

इतना प्यार न वो यदि करती,दुःख इतना क्या होता तुमको ?

कैसा लगता राम,,,!

राम राम कर लंका में वो बिलख बिलख कर रोइ ,

डिगा नहीं पाया उसका मन परलोभन कोई ,

सुवर्ण-द्वीप पटरानी पद क्या छोड़ सके है कोई ?

सेतु बांधते तुम भी क्या यदि उससे प्रेम न होता तुमको?

कैसा लगता राम,,,!

अशोक वाटिका से बुलवाया, अग्नि परीक्षा ले डाली,

शंका तुमने इस से अपनी सार्वजानिक कर डाली ,

उस पर भी वो प्राणवल्लभा निष्कासित कर डाली !

कभी कचोटता है क्या अंतर?चैन कभी मिल पाता तुमको ?

कैसा लगता राम,,,!

कैसा लगता राम अगर कहीं सीता ने त्यागा होता तुमको ?

रामायण तब कैसी होती ? जग पुरुषोत्तम कह पाता तुमको?

<u>हे कष्टहरण ,,,,</u>

जय हनुमान ज्ञान गुणसागर, हे पवनपुत्र,हे करुणाकर,

अष्ट सिद्धि नव निधि के दाता, जग के ताप हरो फिर आ कर !

जिस धरती पर राम चले थे,उस पर असुर डोलते हैं अब,

स्वर्ण हिरन का भेस किये,मारीच बहुत घूमते हैं अब,

फिर सुग्रीव भूल गया है,लंका का ही पता लगाना ,

गली गली में बैठा है, अब रावण किये ठिकाना,

उतरो किष्किंधा से महाकाय,भक्तन की सुन लो आ कर !

जग के ताप हरो फिर आ कर !

कलियुग ने सब बदल दिया है,मन पर- मति पर ग्रहण लगा है,

राम राम भजने पर अब,दुनिया का क़ानून कड़ा है,

वंश विभीषण का भी तो, हमसे बैर किये रहता है,

भक्त राम का हर प्रकार से, यों त्रस्त रहा करता है,

ध्वस्त करो दुष्टों की लंका,पुनः पुच्छ में आग लगा कर !

जग के ताप हरो फिर आ कर !

ये सुरसा मुंह फाड़ रही है,धरती सागर से पाट रही है,

औषधियों से हरिक वैद्य की,अमृत अमृत चाट रही है,

रण में मूर्छित हुए पड़े हैं, कितने ही लक्ष्मण भी,

सब जीव जंतु अकुलाहट में,समझ नहीं पाते हैं कुछ भी,

सर्व-रोगहरा ! हे वज्रदेह ! संजीवन दे दो लाकर !

जग के ताप हरो फिर आ कर !

हम मूरख, खल,कामी,तुम शुद्ध भक्त सन्यासी,

हम क्षण भंगुर प्राणी,तुम देह अति अविनासी ,

संकट मोचन, तुम राघव के भरतहि सम भाई ,

सारे काज तुम ही से कह कर सिद्ध करें रघुराई,

हे अञ्जनेय अब ऐसा हो के,रहें सुरक्षित सब जन-नागर !

जग के ताप हरो फिर आ कर !

जय हनुमान ज्ञान गुणसागर, हे पवनपुत्र,हे करुणाकर,

अष्ट सिद्धि नव निधि के दाता, जग के ताप हरो फिर आ कर !

गीत

मन दूषित,कुत्सित, कुंठित है ,

कुछ जुगत करो मोरे राम !

ध्यान लगाना दूभर है ,

मन जैसे कोई छछूंदर है ,

ऐसे क्या संजोग हैं मेरे,

ये किन कर्मों का परिणाम !

जगती ऑंखें भटक रही हैं ,

चकाचौंध हर लपक रही हैं ,

घोर वासना के बंधन में

कितना बीधा हूँ मैं राम !

निद्रा ऐसे स्वप्न दिखाए,

जाने कहाँ कहाँ भटकाए,

तुमको भज कर के भी सोना,

शांत नहीं कर पाता राम

<u>गीत</u>

कितने आकर्षण, कितने बंधन,

कैसे क़ाबू में रह पाए मन ?

बोलो भगवन !

शंख बजाये, भोग चढ़ाये ,

करी आरती, वाद्य बजाये ,

संत सभा में भजन भी गाये,

फिर भी हम ये समझ न पाए,

उचटा उचटा है क्यों मन ?

बोलो भगवन !

इन्द्रिय-निग्रह कर के देखा,

विषयों से कट कर के देखा,

वानप्रस्थ भी जी कर देखा,

निर्जल भी रह कर के देखा,

जग में ही क्यों रमता है मन ?

बोलो भगवन !

संबंधों को मिथ्या समझा,

क्रिया कलाप को माया समझा,

ज्ञान पुस्तकों का कुछ समझा,

कुछ सत्संगों से भी समझा,

छूटे नहीं छुटाये प्रपंचन !

बोलो भगवन !

सुख में दुःख में सम रहने का,

जो मिल जाये वो सहने का,

राम राम करते रहने का,

यही मन्त्र है गर जीने का,

नीरस नीरस क्यों है जीवन ?

बोलो भगवन !

कितने आकर्षण, कितने बंधन,

कैसे क़ाबू में रह पाए मन ?

बोलो भगवन !

गीत

क्षिति जल पावक गगन समीरा ,

इन से क्या क्या रच डाला रघुवीरा !

जितना खोजूं रहे न मति धीरा !

पञ्च कोष्ठ का अधम सरीरा,

जिसमें पञ्च वायु का फेरा,

चित्त वृत्ति संचालित होता ,

नव छिद्रों का आतम-डेरा !

तुम जिसमे हो भी और नहीं रघुवीरा !

जितना खोजूं रहे न मति धीरा !

मन की चंचल गति और माया ,

कोई जिसका पार न पाया,

कितने आकर्षण औ परलोभन ,

जिनसे कोई बच ना पाया !

जकड़े हम, तुम बच निकले रघुवीरा !

जितना खोजूं रहे न मति धीरा !

धर्म, साधना, काम, अर्थ से,

संभव कैसे हो पाए हमसे,

बुद्धि जो है सृष्टि तुम्हारी,

लाख प्रपंच कराये हमसे !

त्रिगुणी माया खेल करे रघुवीरा !

जितना खोजूं रहे न मति धीरा !

ओंकार से वेद पुराना,

और सनातन संपत्ति नाना,

वर्ण ज्ञान और ऋषि मुनि से,

मानव का रच ताना बाना !

इक रामनाम से रीझ गए रघुवीरा !

जितना खोजूं रहे न मति धीरा !

क्षिति जल पावक गगन समीरा ,

इन से क्या क्या रच डाला रघुवीरा !

जितना खोजूं रहे न मति धीरा !

गीत

मंगल भवन अमंगल हारी / सृष्टि तो तुमने रच डाली सारी,

मगर अकेले कितने रह गए / हाय ! अब तुम अजिर बिहारी !

सब का सब कुछ तुम करते हो/ साँस साँस पालन करते हो,

कोई नहीं पर तुमहरी सुध लेता/ नाम भी मतलब से है लेता,

कभी चैन से सांस तो लेते/ दो पल खटिया डाल अटारी !

तुमने जो ब्रह्माण्ड रचाया /कोई समझ क्या उसको पाया,

बेजोड़ कला, उत्कृष्ट सुरचना / फिर भी सबने दिया उलहना,

कुछ अपना ही परिवार रचाते / इससे तो भोले त्रिपुरारी !

कितनी बार जगत में आये / फिर भी यहाँ ठहर ना पाये,

एकाकी ही तुमको भाया / क्यों,जाने ब्रह्माण्ड निकाया,

हमको भी कुछ तो समझाते/ दीनानाथ, बिरद सम्भारी !

गृह, नक्षत्र, चित्त, अनश्वर / पांच तत्व और बुद्धि बन कर,

माया का जो जाल बुन दिया /उससे खुद को अलग कर लिया,

आओ फिर यमुना तट खेलें / अच्युत नरायन,रास बिहारी !

<u>मेरे घर भी आते राम !</u>

मेरे घर भी आते राम !

मैं भी कोई शिला बन जाता,

या शबरी के बेर खिलाता,

या केवट सी नाव बंधाता,

और पर्ण कुटी सजवाता ।

मेरी राह गुज़रते राम !

मेरे घर भी आते राम !

मेरी पूजा में असुर विघ्न हैं,

फेक रहे आहुतियों में भ्रष्ण हैं ,

माना विश्वामित्र नहीं हूँ मैं,

ना ही कोई ज्ञानी हूँ मैं ,

मेरी रक्षा को भी आते राम

मेरे घर भी आते राम !

सो लेते लक्ष्मण जी भी,

जाग जाग मैं पहरा देता,

तुम तीनों सोते मैं पंखा झलता,

काँटों से राह रहित कर देता,

इक अवसर तो देते राम !

मेरे घर भी आते राम !

खर-दूषण में द्वन्द लगाता,

उनको आपस में लड़वाता,

स्वर्ण हिरन को मैं ले आता,

तब क्या रावण भी आ पाता ?

मझको कुछ करने देते राम !

मेरे घर भी आते राम !

रक्षा भक्तों की करने वाले,

असुर शक्तियां हरने वाले,

जन मानस में बसने वाले,

पुरुषोत्तम कहलाने वाले,

मेरी भी पूजा में फलते राम !

मेरे घर भी आते राम !

गीत

अच्छा कान्हां , ये तो बताना, कहाँ बांसुरी सीखी तुमने,

सारा बृन्दावन आता है सुनने !

शरद पूर्णिमा यमुना तट पर/ माया की सुध बुध बिसरा कर,

सब खिंचे चले आते हैं ऐसे / जैसे नीर वसुंधरा पर,

कामदेव का अहंकार तोड़ कर,

कैसा रास रचाया तुमने !

वेद ऋचाएं गोपी बन कर /धरती पर आती हैं सज कर,

पूजी जाती हैं भक्तों में ,जो राधे राधे बन कर,

एक रूप हो कर के भी,

हर का साथ निभाया तुमने !

सात चक्र के सात रंग में / बस कर के हृदय सुरंग में,

सप्त ऋषि और सूर चंद्र में,भाव, भंगिमा, अंतरंग में,

सात सुरों का जादू भर कर,

कैसा नृत्य नचाया तुमने !

मोर मुकुट से भाल सजाये / लकुट कमरिया अंग लगाये,

एक पांव से धरती थामें,दूजे से आशिष बिखराये,

जुग जुग से दर्शन की प्यासी,

सृष्टि को तर डाला तुमने !

गीत

नैनन आय बसो गिरधारी,

जित देखूं ,देखूं छबि तुम-हारी !

कंस कंस चहुँ और हो गए ,अत्याचार बहुत जोर हो गए,

वासुदेव सब नज़रबंद हो गए,जगवासी सब त्रस्त हो गए,

द्वापर के प्रभू कहाँ खो गए ?

संहारन को फिर से आओ, दया करो विष्णु-अवतारी !

नैनन आय बसो गिरधारी !

लकुट कमरिया मोर मुकुट में,फिर दर्शन दो गोवर्धन में ,

गौमताएँ कुन्ज गलिन में ,और कालिया जमना जल में ,

बाट जोहते वृन्दावन में,

और प्रतीक्षा करते करते,थक जाते हैं कृष्ण बिहारी !

नैनन आय बसो गिरधारी !

हमरे अवगुन चित्त न धरिये,हमरी श्रद्धा ही को लखिये,

भक्तन की कुछ लाज तो रखिये,इस जन्म -अष्टमी दर्शन दीजे,

ग्वाल बाल हैं आस लगाए,

और प्रकृति तक लालायित है दर्शन को भाव सागर तारी!

नैनन आय बसो गिरधारी !

जीवन के गुर फिर सिखलाने,मर्म धर्म का फिर समझाने,

हारे मन में साहस लाने, मर्यादा का पाठ पढ़ाने,

भगवत-गीत सुनाओ फिर से,

विराट रूप फिर दिखलाओ,भूले बिसरों को इक बारी!

नैनन आय बसो गिरधारी !

गीत

श्री कृष्ण गोविन्द हरे मुरारे,

अच्युत अनंता भगत-पियारे,

हरहु नाथ मम अवगुन सारे !

बहुत हाड़ मांस ने दुलराया,वैभव ने क्या क्या दिखलाया,

संचित संजोगों ने भी चाहत से ज़्यादा उलझाया।

काटो अब ये बंधन सारे !

हरहु नाथ मम अवगुन सारे !

भावों में कुंठा है मेरे, मति में कितने भ्रम के डेरे,

मिथ्या की वेदी पर जीवन घूम घूम करता है फेरे।

जनन जनम के चक्र छुटा रे !

हरहु नाथ मम अवगुन सारे !

पञ्च वायु का तर्पण मेरा, पञ्च कोष का अक्षत मेरा,

आह आह का क्रंदन मेरा, अर्पण सब चरणों में तेरा।

धर दृष्टि इधर भी धरती-धारे !

हरहु नाथ मम अवगुन सारे !

श्री कृष्ण गोविन्द हरे मुरारे,

अच्युत अनंता भगत-पियारे,

हरहु नाथ मम अवगुन सारे !

गीत

अगर मैं अर्जुन नहीं हो सका,

तो क्या योगेश्वर ! साथ न दोगे ?

माना रिश्ता नहीं है तुमसे, पर बंधन तो हैं सांस सांस के,

रग रग में तुम बसे हुए हो, इस शरीर में हाड़ माँस के ,

मुझको चक्रव्यूह का तोड़ ने दोगे?

क्या योगेश्वर ! साथ न दोगे ?

रण में मैं भी खड़ा हुआ हूँ, नातों के संग भिड़ा हुआ हूँ,

युद्ध करूँ इनसे या छोड़ूं, इस दुविधा में पड़ा हुआ हूँ,

मुझ दुर्बल मन को ज्ञान न दोगे?

क्या योगेश्वर ! साथ न दोगे ?

कटा अंगूठा नहीं किसी का, मेरे कारण कहीं किसी का,

हर एक लक्ष्य हर एक निशाना, चूका जाने क्यों मुझ ही का,

हार चुके भक्तों का साथ न दोगे ?

क्या योगेश्वर ! साथ न दोगे ?

कोई द्रौपदी नहीं वरण की, बृहन्नला बन नहीं शरण ली,

जग ने मेरी पहचान नहीं की, और न पाई मैं ने कीर्ति क्षण की,

मुझ गिरे हुए को हाथ न दोगे?

क्या योगेश्वर ! साथ न दोगे ?

<u>नियम प्रकृति के ,,,</u>

कर्मों का फल देने वाले,

बदल दिए क्या नियम प्रकृति के ,

या भगवन,हम ही मारे हैं कुमति के ?

मानवता का चीर हर रहे,वो तो फूले फले जा रहे,

औ जो सज्जन धर्म निभाते,वे बेचारे मरे जा रहे,

धर्म भी अब परिभाषित होगा

क्या मानव ही की मति से?

पंचभूत को दूषित करते , मैं मैं कर इतराते फिरते,

षड्यंत्रों का जाल बिछा कर,बाहर से मुस्काते फिरते,

पाल रहे हैं इन जैसों को

अब क्या इष्ट सुरति के ?

क्षण भंगुर, पर जिए जा रहे,विश्व नियन्त्रणकिये जा रहे,

अमृत वाणी बोल बोल कर विषमय जग को किये जा रहे,

अभय-दान है इनको क्या

जग-संहार दुर्गति से ?

कर्मों का फल देने वाले,

बदल दिए क्या नियम प्रकृति के ,

या भगवन,हम ही मारे हैं कुमति के ?

होली

फाल्गुन की पूनम में होलिका दहन ,

जैसे चाँदी की थाली में सोने का धन ,

जैसे अल्हड का हो जाये मतवाला मन ,

जैसे घूंघट में गोरी की छाजनकी छन्न ,

जैसे कान्हा की मुरली की प्यारी सी धुन ,

जैसे देवोँ का धरती पे हो अवतरन !

सभी देवताओं को, अग्नि को सादर नमन !

सादर नमन !

रावण-वध

पुतले में बारूद छुड़ाकर, मत रावण-वध का ढोंग रचाओ,
राघव के अवतार नहीं तुम,स्वतः स्वयं को मत भरमाओ !

त्रेता के रावण में अब में, युगों युगों का अंतर आया,
सीता एक हरी थी उसने ,ये रावण हर सीता हर लाया ,
गली गली लंका रच उसने तुम्हारा मुंह चिढ़वाया ,
उसका तो कुछ कर न सके तुम ,मूक खिलौना मत फुंकवाओ !

आज विभीषण राज कर रहा,रावण का मुखबिर बन कर के,
दैत्य राज फल फूल रहा है,सुराज्य की क़समें दे कर के ,
प्रश्न उठाते भी डरते हो,सब कुछ जाना बूझा हो कर के ,
रामायण की ओट प्रदर्शन छद्म अहंकार का मत करवाओ !

पहले बन बन भटके के देखो, राज पाट का मोह त्याग कर,
काँटों पर सो कर के देखो, मर्यादा का जीवन जी कर ,
तब समझोगे राम की लीला औ भागा रावण क्यों सीता ले कर,
अवलोकन कर पाओ तब शायद, दश-हारा सही मनवाओ !

<u>दीवाली</u>

मन का तिमिर हटाऊँ जब मैं

तब दीवाली के दिए जलाऊँ !

स्वच्छ करूँ जब बगिया अपनी प्रेम के उसमें फूल उगाऊं

इसको,उसको ,तुमको,सबको लेकर फिर एक गीत रचाऊं

जीवन की खुशियां तब गा कर

राम विजय की जीत मनाऊं !

तब दीवाली के दिए जलाऊँ !

देश की रक्षा,धर्म की रक्षा, रक्षा सब विश्वासों की

जीव जंतु आकाश धरा और वृक्ष-पुंज जलधारों की

ब्रह्माण्ड पुत्र का क़र्ज़ उतरूं

नव जीवन की सरगम गाऊँ !

तब दीवाली की दिए जलाऊं !

मैं माटी का मानुस हो कर माटी के ही दिए जलाऊँ

घृत भाव का मन में बोरे बाटी बाटी में बटवाऊँ

अहंकार पर आग जला कर

ज्योति ज्योति से तब फैलाऊँ !

तब दीवाली के दिए जलाऊं !

मन का तिमिर हटाऊँ जब मैं

तब दीवाली के दिए जलाऊं !

शरद पूर्णिमा

तन की छत से छन के अंतस में उतर कर के मेरे

इस शरद की पूर्णिमा में वृत्तियों को शांत कर के मेरे

अनृत का निष्कसन कर ,शुद्धता संचार कर के मेरे

इस चांदनी मुझको सुझा हेतु क्या जीवन के मेरे

अभिभूत कर रश्मियों से हे शशि, नमन स्वीकार कर के मेरे !

कलाकार

वक़्त ने मुद्दतों हुनर को तलाशा, सदियों ने तब जा के इसको तराशा,

कला ने दुआ दी औ हस्ती सँवारी, नज़र चाँद, तारों, ज़मीं ने उतारी,

हज़ारों में तब एक पैदा हुआ वो,हुनरमंद,आलिम या शायर हुआ जो ,

भटकती हुई क़ौम की रहबरी में ,हरिक काम जिसका हुआ बेहतरी में,

जो देवी का वरदान बन कर मुजस्सिम, रौशनी ज्ञान की बन के देता विहंगम,

जो तांडव की ऊर्जा है नटराज रूपम,जो वीणा की देवी का अवतार रूपम,

ओ ब्रह्मा की शृष्टि संसार रूपम,नमस्तुभ्यं,नमस्तुभ्यं कलाकार रूपम !

जीवन का आधार मिला तो बस इक तेरा नाम,

दसों दिसा परनाम प्रभु जी दसों दिसा परनाम !